



स्थानीय संसाधन आधारित जैविक खेती से बढ़ाएं आमदनी

अजीत कुमार सिंह*, रवीन्द्र कुमार सिंह*, अंजनी कुमार**, अमरेन्द्र कुमार** और प्रज्ञा भदौरिया**

॥ भारत में प्रकृति आधारित कृषि का प्रचलन आदि काल से रहा है। इसमें प्राकृतिक संसाधनों के माध्यम से विभिन्न फसलों की सफलतापूर्वक खेती की जाती थी। कृषि के वर्तमान सघन निवेश आधारित नवीन वैज्ञानिक स्वरूप के विकास के साथ-साथ देश की प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित परंपरागत कृषि धीरे-धीरे हाशिये पर पहुंच गयी है। खाद्य पदार्थों की घटती गुणवत्ता और कृषि रसायनीकरण से सुरक्षा के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण जैविक खेती आज एक वैकल्पिक प्रणाली के रूप में उभरी है। जैविक कृषि, भारतीय कृषक समुदाय, विशेष रूप से, अनुसूचित जनजातियों के सबसे कमजोर वर्ग के लिए एक ऋण मुक्त एवं लाभदायक आजीविका विकल्प है। ॥

भारत में जैविक कृषि के विकास के तीन मुख्य आयाम हैं। जैविक खेती करने वाले किसानों की पहली श्रेणी में वे किसान हैं, जो ऐसे क्षेत्रों में स्थित हैं, जहां रासायनिक कृषि उत्पादनों की उपलब्धता अब तक या तो नहीं हो पायी है या फिर इसका नगण्य उपयोग हो रहा है। ऐसे क्षेत्रों में जैविक खेती ही जीवन का आधार है और लोग इसे अपनी परंपरा का हिस्सा मानते हैं। किसानों



कीट प्रबंधन हेतु जैविक कीटनाशी का उत्पादन

की दूसरी श्रेणी में वे हैं, जिन्होंने हाल ही में पारंपरिक कृषि के बुरे प्रभावों जैसे मृदा की गिरती उर्वरता, खाद्य विषाक्तता या बढ़ती लागत और कम लाभ आदि के मद्देनजर जैविक कृषि को अपनाया है। तीसरी श्रेणी में उद्यमी किसानों को शामिल किया गया है। इन्होंने उभरते हुए बाजार के अवसरों और उच्च कीमतों पर नियंत्रण हासिल करने के लिए व्यावसायिक जैविक कृषि को व्यवस्थित रूप से अपनाया है। पहली श्रेणी के अधिकांश किसान पारंपरिक रूप से जैविक खेती कर रहे हैं। इन किसानों के प्रक्षेत्र प्रमाणित नहीं होते

**कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, रांची; *कृषि विज्ञान केंद्र, रांची



पारंपरिक जैविक खेती

हैं। दूसरी श्रेणी के किसानों में प्रमाणित और गैर-प्रमाणित दोनों प्रकार के प्रक्षेत्र होते हैं। तीसरी श्रेणी के अधिकांश किसानों के प्रक्षेत्र प्रमाणित होते हैं। तीसरी श्रेणी व्यावसायिक जैविक किसानों की है, जो सबसे अधिक ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। आज जैविक कृषि पर उपलब्ध संपूर्ण आंकड़े मुख्यतः इन व्यावसायिक जैविक किसानों से संबंधित हैं।

वर्ष 2016 तक दुनिया के 187 देशों में जैविक खेती की जा रही थी। जैविक खेती का वैश्विक क्षेत्रफल बढ़कर 72.3 मिलियन हैक्टर हो गया है। इसमें 1003 प्रमाणन संस्थाओं के साथ रूपांतरण के तहत का क्षेत्रफल भी शामिल है। विश्व में कुल कृषि योग्य भूमि का 1.6 प्रतिशत क्षेत्र ही जैविक है। जैविक उत्पादों का वैश्विक बाजार अब 106 बिलियन अमेरिकी डॉलर (एफएओ वर्ष 2019) के स्तर पर पहुंच गया है। भारत में जैविक प्रमाणीकरण प्रक्रिया के तहत 10171922 हैक्टर से अधिक क्षेत्र पंजीकृत है। इसमें 5391792.97 हैक्टर क्षेत्र में कृषि जैविक रूप से की जा रही है, जबकि शेष 4780130.56 हैक्टर वन फसल संग्रह क्षेत्र है। जैविक प्रमाणन हेतु देशभर में 29 प्रमाणन एजेंसियां कार्य कर रही हैं। भारत 2900000 टन जैविक उत्पादों का उत्पादन करता है तथा 312800.51 टन जैविक



जैविक खेती के अंतर्गत गोभी

रोग और कीट प्रबंधन

जैविक कृषि प्रणाली में रोग और कीट आमतौर पर बहुत महत्वपूर्ण समस्या नहीं हैं। संतुलित पोषण के साथ स्वस्थ मृदा में रहने वाले स्वस्थ पौधे कीट/रोग के प्रकोप का प्रतिरोध करने में बेहतर पाए गए हैं। इस प्रणाली में विभिन्न प्राकृतिक घटकों का संतुलित उपयोग करते हुए वैज्ञानिक फसल प्रबंधन किया जाता है। इससे रोग व कीट आर्थिक क्षति के स्तर तक कम ही पहुंच पाते हैं। हालांकि, जैविक फसलों में कीट और रोगों से कभी-कभी क्षति देखी जाती है, जो मुख्यतः बड़ी जोत में विशेष रूप से गंभीर हो सकती है, जहां एक ही फसल कई हैक्टर या बड़े क्षेत्रफल में उगाई गयी हो। जैविक कृषि प्रणालियों में कीट/रोग नियंत्रण रणनीतियां मुख्य रूप से उपचारात्मक या नियंत्रक की बजाय निवारक हैं। रोग व कीट प्रबंधन हेतु आच्छादित और अनाच्छादित क्षेत्रों के बेहतर संतुलन व प्रबंधन, फसल प्रजातियों में विविधता, सामयिक फसलचक्र, परजीवी, प्रतिस्पर्धी और लाभकारी शत्रु कीटों तथा जीवों की एक विविध आबादी को बनाकर आसानी से आर्थिक क्षति के स्तर तक इन्हें पहुंचने से रोका जा सकता है। ऐसी मृदा जहां लाभकारी जीवों की संख्या उच्च स्तर पर होती है, वहां पर हानिकारक जीवाणुओं के बढ़ने की आशंका कम हो जाती है। नीम, करंज तेल, नीम बीज सत (एनएसकेई) और दशपर्णि, निमास्त्र, ब्रह्मास्त्र इत्यादि हर्बल अर्क के आवधिक छिड़काव को रोग और कीटों के प्रबंधन के लिए निवारक के रूप में इस्तेमाल किया गया था। इन उत्पादों की तैयारी एवं प्रकोप के लिए ग्रामीणों को ठीक से प्रशिक्षित किया जाना जरूरी होता है। ट्राइकोडर्मा, स्यूडोमोनस, नीम/करंज खली के मृदा में प्रभाव ने मृदाजनित रोगों को कम करने में मदद की है। प्रतिरोधी किस्मों, कर्षण क्रियाओं, यांत्रिक नियंत्रण, प्राणिक नियंत्रण और जैव नियंत्रण जैसे अन्य सभी तरीकों का उपयोग और अभ्यास करने के बाद हर्बल अर्क को केवल एक अंतिम उपाय के रूप में इस्तेमाल किया गया। दशपर्णि एवं अन्य हर्बल अर्क बनाने के लिए फफूंदनाशक और कीट निवारक गुणों वाले उपलब्ध स्थानीय पौधे इस्तेमाल किये गये। आत्मनिर्भरता के लिए फफूंदनाशक और कीट निवारक गुणों वाले पौधों को खेत के मेड़ों पर, खाली पड़े क्षेत्रों और रास्तों के किनारे विकसित किया गया।

उत्पादों का निर्यात करता है। इसका मूल्य लगभग 708.33 मिलियन अमेरिकी डॉलर है, जो रुपये 5525.18 हजार करोड़ के बराबर है (2022-23)। झारखंड में जैविक खेती प्रमाणन प्रक्रिया के तहत 54,119.87 हैक्टर क्षेत्र को 2022-23 तक पंजीकृत किया गया है। इसमें से 4,363.09 टन जैविक उत्पादों का उत्पादन होता है (स्रोत-एपीडा)।

झारखंड प्रदेश के बहुत से आदिवासी बाहुल्य क्षेत्रों में आज भी नगण्य रसायनों का उपयोग किया जाता है। ये क्षेत्र आज तक स्वाभाविक रूप से जैविक हैं। इन स्थानों पर व्यवस्थित जैविक कृषि की बहुत अधिक संभावनाएं हैं। जैविक कृषि, कृषि की एक प्रकृति आधारित टिकाऊ और पर्यावरण के अनुकूल उत्पादन विधि है तथा छोटे व सीमांत आदिवासी किसानों के लिए विशेष लाभकारी है। यह भारत



जैविक खेती का प्रशिक्षण

जैसे विकासशील देशों में छोटे किसानों के लिए यह एक उपयुक्त प्रणाली है। व्यावसायिक जैविक कृषि जैव-विविधता और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के साथ-साथ कृषि की लागत को कम करके टिकाऊ उत्पादन द्वारा गरीबी उन्मूलन और खाद्य सुरक्षा में योगदान कर सकती है।

व्यावसायिक जैविक खेती के सफल प्रसार के लिए कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा बड़ी संख्या में 'स्थानीय संसाधन आधारित कम लागत में जैविक खेती' विषय पर विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इन प्रशिक्षण कार्यक्रमों के तहत 1500 से



किसानों से बातचीत करते केवीके वैज्ञानिक

अधिक किसानों को प्रशिक्षित किया जा चुका है। केवीके जैविक कृषि से संबंधित विषयों पर आदिवासी क्षेत्रों में किसान मेलों एवं किसान गोष्ठियों आदि आयोजित कर रहा है। इन सभी माध्यमों से भी कम खर्चीली जलवायु अनुरूप जैविक खेती का प्रचार-प्रसार कर इसे बढ़ावा दिया जा रहा है। केवीके द्वारा ऑन फार्म ट्रायल (प्रक्षेत्र परीक्षण) और अग्रपंक्ति प्रदर्शन के माध्यम से किसानों के प्रक्षेत्रों पर इन तकनीकों के मूल्यांकन और प्रसार हेतु लगातार कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं।



खेतों में काम करते कृषक

सारणी 1. जैविक कृषि से फसल स्वरूप में परिवर्तन

क्र.सं.	मौसम	फसल	क्षेत्रफल (प्रतिशत में)	
			जैविक खेती	पारंपरिक खेती
1.	खरीफ	धान	50	70
		सब्जियां	30	00
		दलहन व अन्य	20	25
2.	रबी	सब्जियां	40	20
		दलहन	20	-
		तिलहन	10	10
		गेहूं	5	-
3.	जायद	सब्जियां	20	-
		धान	30	20
फसल सघनता (प्रतिशत में)			225	145
फसल सघनता में वृद्धि (प्रतिशत में)			5517	

मृदा स्वास्थ्य प्रबंधन

टिकाऊ जैविक खेती हेतु मृदा में जैव कार्बन के भंडार को बढ़ाने पर जोर दिया जाता है। जैव कार्बन में वृद्धि से मृदा की भौतिक (मृदा संरचना, जल अवशोषण एवं जल धारण क्षमता, वायु का संचार, मृदा तापमान एवं मृदा क्षरण)रासायनिक (जैसे-पी-एच मान को ठीक रखना, धनायन विनिमय क्षमता में वृद्धि, उपलब्ध पोषक तत्वों में वृद्धि इत्यादि) एवं जैविक अवस्थाओं (लाभदायक जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि एवं हानिकारक जीवाणुओं की संख्या में कमी) में सुधार होता है। मृदा जैव कार्बन में तीन तरीकों से सुधार किया गया। मिट्टी में पौधों के अवशेषों को मिलाकर, मृदा में जैविक खाद की मात्रा में वृद्धि करके और अपघटन के नुकसान को कम करके मृदा जैव कार्बन भंडार को सुधारने और संरक्षित करने के लिए जुताई तकनीकी में सुधार व न्यूनतम जुताई, फसल अवशेषों का समुचित प्रबंधन, फसलचक्र, हरी खाद एवं जैव पलवार को बढ़ावा दिया गया।



किसानों के बीच जैविक कृषि प्रणाली के प्रति सकारात्मक रुझान के कारण सर्वप्रथम रांची जिले के अनगडा प्रखंड के अंतर्गत आने वाले गांव धुरलेटा को वर्ष 2014 में ‘पूर्ण जैविक प्रमाणित गांव’ के रूप में विकसित करने के लिए चयनित किया गया। इसके साथ के गांव बुढ़ाकोचा एवं पिपराबेड़ा का भी चयन किया गया। नाबार्ड और कृषि विज्ञान केंद्र की आदिवासी उप-योजना से इन सभी गांवों में जैविक कृषि हेतु बुनियादी ढांचे के विकास के लिए वित्तीय सहायता प्राप्त हुई। इससे 150 एकड़ के जैविक क्लस्टर की स्थापना की गई, जो वर्तमान में पार्टिसिपेटरी



जैविक उत्पादों का निरीक्षण करता किसान

गारंटी प्रणाली (पीजीएस) के तहत प्रमाणित है। इसके अंतर्गत बाद में आसपास के 9 अन्य गांवों जैसे-सिमराटोली, गुंडलीटोली, नगराबेड़ा, दुबलाबेड़ा, ओबर, नवागढ़, रंगामाटी, बढ़की गोड़ांग एवं सोसो के 465 एकड़ कृषि योग्य भूमि को साथ सम्मिलित किया गया। इस कार्यक्रम के तहत इन गांवों के सभी 418 आदिवासी परिवारों की कुल 615 एकड़ कृषि योग्य भूमि को जैविक खेती के अंतर्गत लाया गया। इन गांवों को एक सफल जैविक कृषि संकुल के रूप में स्थापित करने के क्रम में कई योजनाओं पर कार्य किया गया।

जागरूकता कार्यक्रम और तकनीकी प्रशिक्षण

कृषि विज्ञान केंद्र ने प्रमाणित जैविक

प्रमुख चुनौतियां

- जैविक सब्जियों की कीमतों का स्थिर न होना। समय-समय पर पारंपरिक विधि से उत्पादित उत्पादों की कीमतों के बहुत कम होने से जैविक उत्पादों के मूल्यों पर भी असर पड़ता है। यह छोटे शहरों के बाजारों में जैविक उत्पादों के मूल्य को बहुत अधिक प्रभावित करता है।
- वर्तमान में जैविक उत्पादन की मात्रा बहुत कम स्तर पर है इसलिए ये उत्पाद बड़े बाजारों तक बहुत कम पहुंच पाते हैं। इसके परिणामस्वरूप किसान अपने पक्ष में बहुत अधिक मोलभाव करने की स्थिति में नहीं रहते, विशेषकर कम अवधि में ख़राब होने वाली सब्जियों और फलों में।
- जैविक खेती छोटे किसानों के बीच लोकप्रिय हो रही है। बड़े और व्यावसायिक किसानों के बीच लोकप्रियता हासिल करना अभी बाकी है।
- प्रमाणन प्रक्रिया महंगी एवं जटिल होने और पीजीएस प्रमाणित जैविक उत्पादों को निर्यात हेतु स्वीकार्य न होने के कारण उत्पादकों को अधिक लाभ से वंचित रहना पड़ रहा है।

कृषि की ओर किसानों को प्रेरित करने के लिए प्रत्येक चयनित गांव में दो जागरूकता कार्यक्रम आयोजित किए। इससे ग्रामवासी जैविक संकुल बनाने हेतु प्रेरित और सहमत हुए। किसानों में जैविक कृषि तकनीक को बढ़ावा देने एवं इन तकनीकियों से उनकी क्षमता वर्द्धन और इन्हें सुगमता से अपनाने

सारणी 3. जैविक खेती में आय-व्यय विवरण

क्र. सं.	फसल	लागत		कुल आय		शुद्ध आय		लागत: आय अनुपात	
		पारंपरिक खेती	जैविक खेती	पारंपरिक खेती	जैविक खेती	पारंपरिक खेती	जैविक खेती	पारंपरिक खेती	जैविक खेती
1.	धान	20044	17721	29400	37400	9356	20179	1.47	2.11
2.	गोभी व आलूवर्गीय फसलें (मिर्च छोड़कर)	31540	28945	80000	112000	48460	83055	2.54	3.87
3.	गाजर, मूली, भिंडी व कद्दू	26160	24660	67200	102000	41040	77340	2.57	4.14
4.	बेलदार सब्जियां, मिर्च, मटर व लोबिया	32537	31005	60000	81600	27463	50595	1.84	2.63
5.	दलहन (उड़द, चना, मसूर, अरहर)	12105	11100	17920	20160	5815	9060	1.48	1.82
6.	सरसों	11996	10540	13440	15120	1444	4580	1.12	1.43

जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए केवीके, रांची की पहल

आधुनिक कृषि के प्रतिकूल प्रभाव न केवल खेत पर बल्कि मानव सहित सभी के स्वास्थ्य पर देखे जा रहे हैं। इस स्थिति से उबरने के लिए, स्थानीय संसाधन आधारित पर्यावरण अनुकूल जैविक खेती सामान्य रूप से मनुष्य के स्वास्थ्य की सुरक्षा के लिए समय की मांग है। जैविक उत्पादों का बाजार विश्वभर में तेजी से बढ़ रहा है। स्वास्थ्य की चिंता के साथ-साथ पर्यावरण के मुद्दों के प्रति बढ़ती जागरूकता के कारण समय के साथ जैविक उत्पादों की मांग का बढ़ना तय है। झारखंड में विशेष रूप से आदिवासी क्षेत्रों में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों और वैश्विक बाजार के विस्तार के कारण, जैविक खेती के माध्यम से आदिवासी, छोटे और सीमांत किसानों के सामाजिक-आर्थिक उत्थान की बहुत अधिक संभावना है। दिव्यायन कृषि विज्ञान केंद्र, रांची जिले में और आसपास के क्षेत्रों में जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए बहुत से प्रयास कर रहा है।



बहुसंख्यक आदिवासी किसान छोटे या सीमांत किसानों की श्रेणी में आते हैं और उनकी सामाजिक-आर्थिक स्थिति उन्हें खर्चीली नवीन वैज्ञानिक उत्पादन तकनीक अपनाने के लिए प्रोत्साहित नहीं करती है। इस प्रकार स्थानीय संसाधन आधारित जैविक खेती रांची और आसपास के आदिवासी गांवों में आर्थिक रूप से लाभप्रद सिद्ध हुई है। किसानों के बीच विश्वास कायम करने के लिए सर्वप्रथम कृषि विज्ञान केंद्र के प्रदर्शन प्रक्षेत्र को वर्ष 2015 और 2016 के दौरान पारंपरिक व वैज्ञानिक जैविक खेती विकल्पों के संयोजन से पूरी तरह से जैविक खेती में बदल दिया गया।

सारणी 2. वैज्ञानिक जैविक खेती का उत्पादन पर प्रभाव

क्र. सं.	फसल	पारंपरिक खेती से उपज (क्वि./है.)	जैविक खेती से उपज (क्वि./है.)	उपज वृद्धि (प्रतिशत में)
1.	धान (अधिक उपजशील प्रजातियां अभिषेक, ललाट, सहभागी, एम टी यू 1010, आई आर 64 डीआरटी)	40	45	12.5
2.	सब्जियां (मुक्त परागित प्रजातियां)			
	गोभी व आलूवर्गीय फसलें (मिर्च छोड़कर)	25	28	12
	गाजर, मूली, भिंडी व कद्दू	15	17	14.3
	पत्तेदार सब्जियां, मिर्च, मटर व लोबिया	9	10	12.5
3.	दलहन (उड़द, चना, मसूर, अरहर)	8	9.5	18.75
4.	सरसों	6.6	8.20	21.1
	औसत उपज वृद्धि (प्रतिशत में)			15.90



जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग

हेतु कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा नियमित अंतराल पर विभिन्न प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन किया गया। इसके लिए प्रत्येक मौसम में ग्रामस्तरीय प्रशिक्षण का भी आयोजन किया जाता है। इससे खेत पर किसानों को वास्तविक तकनीकी समाधान की भी जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार प्रशिक्षित किसानों द्वारा भी आसपास के गांवों में जैविक कृषि तकनीक के विस्तार में मास्टर ट्रेनर के रूप में महत्वपूर्ण योगदान दिया गया। वर्तमान समय में भी इन किसानों द्वारा विभिन्न स्थानों एवं संस्थानों में मास्टर ट्रेनर के रूप में इस तकनीक का प्रचार प्रसार किया जा रहा है।

स्थायी-जैविक खेती के लिए बुनियादी ढांचे का विकास

कृषि विज्ञान केंद्र की आदिवासी उप-योजना एवं नाबार्ड के वित्तीय सहयोग से चयनित गांवों में जैविक खेती के लिए आवश्यक उत्पादों जैसे-गोबर, गौमूत्र आदि के कुशल संग्रह, अपघटन और पशुओं के प्रबंधन के लिए स्थायी बुनियादी ढांचे का निर्माण किया गया। इसके लिए चयनित किसानों के घर पर नाडेप खाद उत्पादन की 146 इकाइयों, 146 वर्मीकम्पोस्ट इकाइयों एवं गौमूत्र को एकत्र करने के लिए 418 पशुशालाओं में पक्के फर्श का निर्माण करवाया गया। इसकी सहायता से किसान सरलतापूर्वक गोबर एवं गौमूत्र का संग्रह कर जैविक खेती के लिए आवश्यक विभिन्न



जैविक खाद से तैयार फसल

खादों का उत्पादन करने लगे। इस प्रकार की तरल जैविक खाद और रोग व कीट से बचाव हेतु आवश्यक विभिन्न जैविक कीट एवं रोगनाशी बनाने के लिए सभी लाभार्थियों के बीच 4180 प्लास्टिक ड्रम का वितरण कर तरल खाद व जैव कीटनाशक इकाई की स्थापना की गयी। इन पक्की इकाइयों के अतिरिक्त किसानों द्वारा स्थानीय संसाधनों जैसे बांस इत्यादि से नाडेप और केंचुआ खाद उत्पादन इकाई का निर्माण किया गया। इन इकाइयों के माध्यम से किसानों द्वारा पर्याप्त मात्रा में कृषि उपादानों का उत्पादन गांव में किया जाने लगा। कृषि में उनकी लागत कम करने के लिए कृषि उपादान उत्पादन हेतु स्थायी संरचनाओं का विकास सहायक सिद्ध हुआ।

चयनित गांवों में कृषि वानिकी मॉडल के विकास के लिए नीम, करंज, टैप्रोसिया, ग्लाइरीसीडिया, सूबबूल आदि के लगभग 10,000 पौधे भी लगाए गए। इनके पत्तों का प्रयोग पलवार, खाद व रोग कीटनाशी बनाने में सहायक हुआ। मृदा स्वास्थ्य में सुधार के लिए मुख्य फसल से पहले हरी खाद की फसल के रूप में ढेंचा की खेती को बढ़ावा दिया गया। मृदा में सूक्ष्मजीवों की गतिविधियों को बढ़ाने के लिए लाभकारी जीवाणुओं की विभिन्न प्रजातियों जैसे-राइजोबियम, एजेटोबैक्टर, एजोस्पेरिलम, पीएसबी, ट्राइकोडर्मा, स्ट्रिगमोनास, बिवेरिया आदि को मृदा में खाद के साथ मिलाया गया। इन जीवाणुओं का प्रयोग उच्च गुणवत्तापूर्ण खाद के निर्माण में भी किसानों द्वारा किया गया। ये पौधों में पोषक तत्व की उपलब्धता बढ़ाने के साथ-साथ रोग नियंत्रण में भी सहायक सिद्ध हुए।

तरल जैविक खाद का निर्माण और व्यवहार

जैविक उत्पादन प्रणाली में उत्पादकता के अंतर को कम करने, पोषक तत्वों की उपलब्धता को सुनिश्चित करने एवं हार्मोन और प्रतिरक्षा सुधार के विकल्प के रूप में तरल जैविक खाद काफी प्रभावी साबित हुई हैं। ये फसलों की उत्पादकता को अधिकतम करने और निरंतर उच्च उत्पादकता के लिए अग्रणी प्रक्रिया का समन्वय करती हैं। ग्रामीणों को स्थानीय संसाधनों की उपलब्धता के आधार पर पौधों की सुरक्षा और मृदा में सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता बढ़ाने के लिए प्रेरित किया गया। ऐसी कई खादों जैसे कि पंचगव्य, सस्यगव्य, जीवामृत, बीजामृत,



विक्री के लिए जैविक उत्पाद

संजीवनी, कुनापजला, बायोगैस अपशिष्ट आदि के उत्पादन और आवश्यकता अनुसार नियमित नियोजित उपयोग के लिए प्रशिक्षित किया गया।

अन्य गतिविधियां

फसलचक्र, मिश्रित फसल, अन्तःफसल, आवरण फसल, न्यूनतम जुताई, जैव उर्वरक, फसल विविधीकरण, हरी खाद के लिए ढेंचा, जैविक पलवार, रक्षक और अवरोधी फसलों के उपयोग से स्थायी पारिस्थितिक जैविक कृषि प्रणाली की स्थापना की गयी।

प्रमाणन और बाजार संबंध

योजनाबद्ध जैविक खेती के कार्यान्वयन के बाद, तीन गांव धुरलेटा, बुढ़ाकोचा और पिपराबेरा अब पूरी तरह से 'एनसीओएफ-पीजीएस इंडिया ऑर्गेनिक' प्रमाणित जैविक ग्राम हैं। नौ अन्य गांव रूपांतरण चरण के तहत हैं और शीघ्र ही ये भी पूर्ण रूप से प्रमाणित जैविक गांव के रूप में विकसित होंगे। किसानों द्वारा जैविक उत्पादन प्रारंभ करने पर कृषि विज्ञान केंद्र ने इन गांवों के उत्पादकों और जैविक खरीददारों का समागम करवाकर क्रेता-विक्रेता संबंध स्थापित किये। अब उन्हें अपने जैविक उत्पादों के लिए उच्च मूल्य मिल रहा है जो स्थानीय बाजार मूल्य से लगभग 10-20 प्रतिशत अधिक है। बाजार के साथ सफल संबंधों और मांग के कारण उनकी उपज सीधे गांवों से विभिन्न विपणन संस्थाओं द्वारा क्रय कर ली जाती है।

स्थानीय संसाधन आधारित जैविक खेती मृदा की उर्वरता को बढ़ाती है तथा पारिस्थितिकी तंत्र को संतुलित करने में मदद करती है। खेती की यह पद्धति कृषि लागत में कमी एवं कृषकों के लिए उपादानों पर निर्भरता को कम करती है। इसके परिणामस्वरूप कृषकों की आय में वृद्धि होती है, जो छोटे एवं सीमांत कृषकों की सामाजिक एवं आर्थिक उत्थान हेतु अत्यंत आवश्यक है। ■